जाट आरक्षण के सबक

-विकास नारायण राय

जाट आरक्षण की आग (18-23 फरवरी 2016) में झुलसे हरियाणा के ट्रिगर पॉइंट चिन्हित हो चुके हैं इस दौरान हुयी अंधी, लगभग बेरोकटोक, हिंसा के परस्पर विरोधी नैरेटिव सुनते हुए आप प्रदेश की राजनीति में जातिगत ध्रुवीकरण के सायों को कभी लम्बे और कभी छोटे होते हुए देखने की नियति से बच नहीं सकते झज्जर में केन्द्रीय सशस्त्र बलों पर हमला, रोहतक छात्रावास में जाट युवाओं की अंधाधुंध पुलिस पिटाई एवं रूट मार्च करते सैन्य बल का दिशाहीन पलायन, जग्गाबाड़ा (हांसी) में दो समुदायों की उन्मादी झड़प, कलायत कस्बे के कैंची मोड़ पर आक्रामक जाट धरना, मुरथल (सोनीपत) में सुरक्षा बलों के हाथों चोट खाए उत्पातियों का तांडव, जैसे और भी तमाम ट्रिगर पॉइंट क्या महज रणनीतिक विफलताओं के सूचक हैं ? हुआ यह कि एक दिशाहीन आर्थिक परिदृश्य में राजनीतिक बिजलियों की मार्गदर्शक कौंध और कानून-व्यवस्था की आश्वस्तकारी कड़क नदारद रही जिसका खामियाजा हरियाणा वासियों ने भुगता। इस समीकरण के बरक्स राष्ट्रीय राजमार्ग नंबर एक पर पानीपत के जाट बहुल सात-आठ हजार मतदाता वाले सिवा गाँव ने अनूठी दास्ताँ लिखी। बहुतेरे गाँवों से भारी संख्या में वहां पहुँच कर आरक्षण समर्थक प्रदर्शनकारियों ने राजमार्ग बंद कर दिया था। राज्य भर में देहातों और शहरों के बीच बढ़ते तनाव के माहौल में वे भी दस किलोमीटर दूर लामबंद होते पानीपत शहर पर कूच करने को आमादा हुए। सिवा के लोग, विशेषकर गाँव की वरिष्ठ स्त्रियाँ जिन प्रदर्शनकारियों को खाना-पानी देते आ रहे थे, उन्हीं के सामने अभेद्य दीवार बन कर अड़ गए और एक बड़ी अनहोनी टल गयी। जींद में नौजवान डिप्टी कमिश्नर ने जाट धर्मशाला में जमा एक बड़ी उत्तेजित भीड़ की गैरत को अपनी शाब्दिक ललकार से ठंडा किया। सारे राज्य में करीब एक हजार करोड़ की सम्पत्ति के विनाश के बीच राजमार्गों पर कई दिन तक हजारों की संख्या में बाहर के ट्रक माल सहित फंसे रहे। पर इक्का-दुक्का मामलों को छोड़कर उन्हें नुकसान नहीं पहुँचाया गया। इसके भी प्रमाण हैं कि जहाँ कई स्थानों पर राजनीतिक इशारे पर हिंसा भड़काने में मर्सिनरी टीमों को सक्रिय देखा गया, वहीं घोर अराजकता के माहौल का फायदा उठा कर आरक्षण से असम्बद्ध बाहरी तत्वों ने भी लूट-पाट में हिस्सा लिया ।

आरक्षण की अबूझ पहेली

नव उदारवादी दौर में, आरक्षण की चौतरफा मांग भारतीय लोकतंत्र के लिए एक अबूझ पहेली बन गयी है. दरअसल बेरोजगार युवाओं के बीच आरक्षण की मनोवैज्ञानिक अपील अस्सी-नब्बे दशक के मंडल कमीशन दौर से कभी कम नहीं हुयी। न इस दशक के राजस्थान, हरियाणा, गुजरात जैसे अन्य पिछड़ा आरक्षितवर्ग में शामिल होने को आतुर किसान समुदायों के खूनी आन्दोलनों से सही सबक लिए गए हैं। स्पष्ट है कि जैसा बन्दर-बंटवारे का हल राजनीतिक हलकों में आजमाया जा रहा है वह सबके लिए संतोषप्रद सिद्ध नहीं हो सकता। यह भी कि सामाजिक समरसता के नजरिये से आरक्षण के नए समीकरणों को कानून-व्यवस्था की मशीनरी के बूते लागू किया जाना श्रेयस्कर नहीं। ग्रामीण भारत में रोजगार और कृषि क्षेत्रों के आर्थिक संकट, आरक्षण केन्द्रित राजनीतिक आन्दोलनों के प्रमुख उत्प्रेरक रहे हैं। इनके वाहक पारंपरिक रूप से सशक्त रहे वे समुदाय हैं जो गत तीन-चार दशकों में औद्योगीकरण और वैश्वीकरण की मार के चलते आर्थिक फिसलन का शिकार बनते गए। जबकि संविधान में जातिगत आरक्षण की व्यवस्था राजनीति, शिक्षा और सरकारी नौकरियों में सामाजिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली के रूप में की गयी थी। स्पष्टत: इसे न तो रोजगार पैदा करने की, न उच्च शिक्षा हासिल करने की और न ही गरीबी उन्मूलन की प्रणाली में बदला जा सकता है। हालाँकि, इन्हीं भावनाओं को भड़काकर तमाम राजनीतिक दलों ने आरक्षण आन्दोलनों का इस्तेमाल वोट बैंकों को चरितार्थ करने में किया है। लिहाजा, इस बीच यह भी सामान्य क्रम जैसा हो चला है कि समय-समय पर आरक्षण के उग्र होते आयाम कानून-व्यवस्था के लिए भी गंभीर चुनौती बनते दिखें। आरक्षण प्रयोगों से निकले राजनैतिक सवाल ताजातरीन, गुजरात में पटेलों को आरक्षण मना हुआ और हरियाणा में जाटों को मिला जबकि दोनों जगह व्यापक सामाजिक तनाव और राज्य विरोधी हिंसा देखने को मिली। आरक्षण के छह दशक से अधिक के प्रयोगों से आज कई ज्वलंत सवाल निकले देखे जा सकते हैं. मसलन, नीति निर्धारकों और योजनाकारों को विचारना होगा कि क्या कृषि और रोजगार जैसे आर्थिक संकट के सन्दर्भ में आरक्षण जैसा राजनीतिक हल संतोषजनक कहा जा सकता है, जिसे जरूरत पड़ने पर पुलिस के जोर से भी लागू करना पड़ेगा । जनमानस में अलग सवाल हैं प्राय: पूछा जाता है कि आखिर जातिगत आरक्षण कब तक चलते रहेंगे ? क्या आरक्षण का आधार आर्थिक नहीं होना चाहिए ? क्या वर्तमान आरक्षण प्रणाली से गुणवत्ता पर असर नहीं पड़ता ? क्या शिक्षा और रोजगार के व्यापक निजीकरण और धन के खेल ने आरक्षण की सामाजिक प्रतिनिधत्व की अवधारणा को कमजोर नहीं किया है ? क्या सबको एक जैसी अच्छी शिक्षा की सुविधा देकर नौकरियों से आरक्षण को समाप्त कर देना चाहिए ? क्रीमी लेयर के सिद्धांत को हर तरह के आरक्षण पर लागू करना चाहिए या नहीं ? सामाजिक-शैक्षणिक रूप से आगे बढ़ चुकी जातियों को आरक्षण से बाहर करने के लिए पुनर्विचार के दायरे में लाया जाय ? न केवल इन सवालों पर शतुर्मुर्गी अस्पष्टता देखने को मिलती है बल्कि राजनीतिक क्षेत्रों में बराबर कशमकश हावी रहती है कि सर्वोच्च न्यायालय की तयशुदा पचास प्रतिशत की आरक्षण सीमा को कैसे लांघा जाय !

हरियाणा में जाट समुदाय की हताशा

जनवरी 2016 में सर्वोच्च न्यायालय ने पूर्व में निरस्त जाट आरक्षण की पुनर्विचार याचिका भी ठुकरा दी। हरियाणा में आरक्षण के गिर्द जाट लामबंदी को पहले से अन्य पिछड़ा वर्ग में शामिल किसान समुदायों विशेषकर सैनी और यादव समुदाय ने शुरू से ही बेहद शक की निगाहों से देखा था। उनके नजरिये से, राजनीतिक रूप से बढ़े-चढ़े जाटों का इस आरक्षित वर्ग में प्रवेश का मतलब होता उनके अपने दबदबे का कम होना। कृषि क्षेत्र का बढ़ता संकट तमाम ग्रामीण तबकों में, जाटों में भी, रोजगार का दुर्भिक्ष लेकर आया पर इसका मतलब यह तो नहीं कि लोमड़ी को मुर्गियों के दड़बे में डाल दिया जाय ! लेकिन विभिन्न समुदायों की इस बढ़ती छटपटाहट पर राज्य सरकार का रवैय्या पहले की तरह आश्वासनों से स्थिति टलने की प्रतीक्षा वाला ही रहा. विरोधस्वरूप जाटों का चौदह फरवरी सांपला (रोहतक) में संघर्ष पर विमर्श का आयोजन महज एक और समझौतावादी जमावड़ा-भर सिद्ध नहीं हुआ। राजनीतिक अनिश्चितता के बीच, आन्दोलन के वरिष्ठ नेताओं के संयम मार्ग को धता बता कर उत्तेजित युवाओं ने राजमार्ग और रेलमार्ग पर घेरा डाल दिया। आंदोलित कृषक समुदाय के सरोकार जोतें छोटी होती जाने और फसल की कीमतों में ठहराव के चलते किसान के लिए खेती हताशा का सौदा बन चुकी है। कृषि जमीन के व्यापक अधिग्रहण ने ग्रामीण युवाओं को एक अनिश्चित भविष्य की दहलीज पर ला खड़ा किया है। रोहतक, झज्जर और सोनीपत जैसे दिल्ली से लगे जिलों में खाए-अघाए लेकिन कृषि रहित जीवन के लिए बे-तैयार ग्रामीण युवाओं का सब्र का बांध खासा कमजोर हो चला है। भाजपा ने लोकसभा/विधानसभा विजय अभियान में जाटों को आरक्षण की परिधि में बनाये रखने का वादा किया था। साथ ही कृषि उत्पादन की कीमतों को आकर्षक रखने वाली स्वामीनाथन कमेटी की सिफारिशों को लागू करना भी पार्टी की चुनावी रणनीति का अहम हिस्सा था। केंद्र और राज्य में भाजपा सरकार होने के बावजूद दोनों मुद्दों पर वांछित पहल के अभाव ने एक रोष भरे व्यापक जन-आन्दोलन की जमीन तैयार की. राजनीतिक सत्ता की बागडोर अन्य समुदायों के हाथ में जाने की मन:स्थिति ने जाटों की उपेक्षा की आग में घी का काम किया

हरियाणा में जाट समुदाय की स्थिति

हरियाणा की राजनीतिक सत्ता में सदा से जाटों की प्रभावी भागीदारी निर्विवाद रूप से चली आ रही है। स्वाभाविक था कि वे अपनी आर्थिक समस्याओं का हल भी अपनी राजनीतिक प्रभुता में ढूँढते। पूर्ववर्ती कांग्रेसी हुड्डा सरकार के समय में इस खींचतान का संतुलन मुख्यत: दो उपायों से बना रह सका। एक तो किसानों को अधिग्रहीत कृषि भूमि की ऊंची कीमतें दी जाने लगीं जो छोटी जोत के किसानों के लिए घाटे की कृषि के मुकाबले कहीं बेहतर वक्ती विकल्प जैसा लगता था। 2012 के केन्द्रीय कांग्रेसी सरकार के भूमि अधिग्रहण बिल ने भी इस सम्बन्ध में किसानों की मोलभाव क्षमता को मजबूत किया। दूसरे, हरियाणा के तत्कालीन मुख्यमंत्री भूपेन्द्र सिंह हुड्डा के नेतृत्व में बने कृषि मूल्य आयोग ने कृषि उत्पादनों के आयात-निर्यात आवृत्ति चक्र को किसानों के हक में भी इस्तेमाल किया । फलस्वरूप किसान को अपनी फसल की लगातार बेहतर कीमतें मिलीं. बेशक इन कदमों ने हुड्डा सरकार को जाट आरक्षण की उग्रता से अस्थायी राजनीतिक शांति दिलाये रखी । हालाँकि अंतत: कांग्रेस को 2014 के लोकसभा चुनाव से ऐन पहले जाट आरक्षण बिल का दिखावा करना पड़ा ।

आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक मॉडल

हरियाणा में आम समझ है कि उस दौर में शासन-प्रशासन ने जनता को आरक्षण हिंसा के रहमो-करम पर छोड़ दिया था। हालाँकि जिस व्यापक पैमाने पर इस हिंसक आन्दोलन ने प्रदेश को अपनी गिरफ्त में ले लिया उसे सामान्य कानून- व्यवस्था के मानकों से आंकना उचित नहीं है, तो भी सर्वव्यापी जड़ता को 'पॉलिसी पैरालिसिस' की संज्ञा देना ही उचित होगा। यह बुनियादी तथ्य समझ लेना चाहिए कि पुलिस बल के कलेवर को न पेशेवर रहने दिया गया है और न सत्ता निरपेक्ष। समय की मांग थी एक रणनीतिक नेतृत्व और लोकतांत्रिक तेवर वाली पुलिस। इसके आभाव में, यह एक आधे-तिहाई मन से स्वयं को ही बचाने में लगी पुलिस सिद्ध हुयी। क्या इस व्यापक हिंसा का कोई विकल्प था ? हरियाणा के बाद गुजरात में भी आन्दोलनकारियों में धारणा घर कर गयी है कि सरकार केवल हिंसक उत्पात की भाषा ही समझती है। यह भी स्पष्ट है कि आरक्षण, राजनीतिक रूप से मजबूत को मिलता है न कि कमजोर को, जैसा कि आम धारणा में प्रचलित है। आर्थिक, राजनीतिक और कानून-व्यवस्था के तीनों आयामों के नए मॉडल पर काम किये बिना इसके जहरीले प्रभावों से समाज बच नहीं सकता व्यक्तिगत नहीं परस्पर आधारित रोजगार कौशल, तमिलनाडु जैसा लचीला आरक्षण ढांचा और समुदाय केन्द्रित संवेदी पुलिस क्रमश: इन आयामों के प्रस्थान बिंदु हो सकते हैं।

तुर्की-ब-तुर्की / तेरे टर्न ओवर से हमारा क्या काम लाला रामदेव

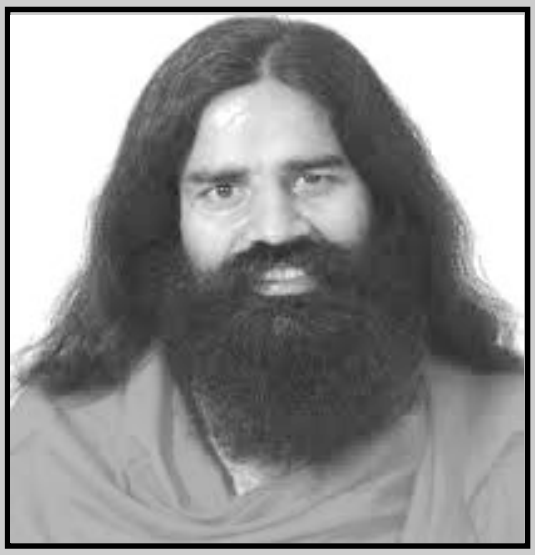

''विश्व स्तरीय मंदी के दौर में भी हमारा टर्न ओवर 150 प्रतिशत बढ कर 5000 करोड़ हो गया है। यह जल्द ही 10 000 करोड़ तक पहुंच जायेगा।''

''हमारा कहना है-

 लाला रामदेव, माफ़ करना अब तुझे बाबा रामदेव कहने का दिल नहीं करता। वैसे भी आजकल आपका पूरा ज़ोर अपने पतंजलि प्रोडक्ट बेचने में लगा रहता है, लिहाज़ा आपका लाला पक्ष ही जनता के सामने बार-बार आता है। नये बच्चे तो भूल ही जायेंगे कि योग से भी आपका कभी कोई साम्बन्ध था।

 बुरा न मानें तो एक और सवाल आपके लिये। जितना तेज़ी से आपका टर्न ओवर बढ़ा है उससे काले धन की बू आती है। इस तरह की वृद्धि उसी व्यवसाय में होती है जिसमें काला धन खपाया जाता है। कहीं आप भी तो इस फ़ेर में नहीं उलझ गये हैं। यदि ऐसा हुआ तो वाकई भारतीयों के लिये यह एक असहनीय झटका सिद्ध होगा। आपने भगवे की ऐसी-तैसी तो कर ही दी, आपने सन्यासी चोले को अपमानित कर ही दिया। अब कहीं काले धन की कीचड़ में आप धंसे मिले तो लोग़ों का प्राचीन संस्कृति से विश्वास ही उठ जायेगा।

 समझ में नहीं आता कि जब आपको भगवा चोला ही धारण करना है तो इस लम्बी-चौड़ी मुनाफ़ाखोरी में क्यों पड़े हो ? कहीं ऐसा तो नहीं कि आपने अलग से कोई इन्द्रपुरी बना रखी हो। मुनाफ़े से आप कोई सामाजिक भलाई तो करते दिखते नहीं।

 मानना पड़ेगा कि आपके चेलों में आपके प्रति अपरम्पार श्रद्धा है। उनसे पूछो तो वे कहेंगे कि आप तमाम बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के खिलाफ़ स्वदेशी उत्पादों को बढावा दे रहे हैं, इसलिये पूज्य हैं। समझ में नहीं आता कि देशी मुनाफ़ाखोरों के हाथों लुटना किस लिहाज से कम कष्टदायक है ? फ़िर आप भी तो बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की तरह पैकेजिंग ही तो करते हो।

 बाकी बातें छोड़िये, ऋषि पतंजली की आत्मा स्वर्ग में निश्चित रूप से तड़प रही होगी। योगसूत्र से विश्व का परिचय कराने वाले इस विद्वान के नाम पर आप टॉफ़ी, कैंडी, सौंदर्य प्रसाधन बेच रहे हैं। स्वयं आजकल आप भी विज्ञापनों में अंग्रेजी बोलते नज़र आते हैं। आपके पतंजलि प्रोडक्ट निर्यात भी किये जा रहे हैं। यानी मुनाफ़ाखोरी के सारे हथकंडे आपके भी दूसरों जैसे ही हैं। आप शायद दुनिया के पहले ऐसे व्यवसायी होंगे जो न भगवा छोड़ते हैं और न मुनाफ़ा।

 सच्चाई तो यह है कि हमें आपकी चिन्ता सता रही है। हमारे आसपास के स्टोर्स पर आपका माल नज़र नहीं आता। गिनती की दुकाने हैं जहां आपके बोर्ड दिखाई देते हैं। ऐसे में 5-10 हज़ार करोड़ का दावा गले से नहीं उतर पा रहा। रात सपने में आप तिहाड़ जेल में बैठे नज़र आते हैं। कभी-कभी आपके प्रशंसक बजाय रामदेव की जय बोलने के दामदेव की जय बोलना शुरू कर देते हैं। काश कोई ऐसा योग आसन होता जो आपको मुनाफ़ाखोरी से मुक्त कर पाता। इसी दुआ के साथ...

दस वर्ष की आमदनी

अध्यापक - 20 लाख
इंजीनियर - 50 लाख
डाक्टर - 70 लाख
आईएएस- 1 करोड़
निर्मल बाबा - 238 करोड़
रामदेव बाबा- 1177 करोड़
सत्य साई - 4000 करोड़
अपना अपना व्यवसाय चुन लीजिए